उमास्वाति-आर्यसमुद्रनां नवप्राप्त पद्यो विषे

मधुसूदन ढांकी

उपर्युक्त विषयमां मुनिवर शीलचन्द्र विजयजीए "**टूंकी नोंध**" १. **त्रण मूल्यवान पद्यो** अन्तर्गत **अनुसंधान** अंक ३, पृ.२१ पर उमास्वातिनां बे तथा त्यां पृ. २२ पर आर्य समुद्रना नामे उध्धृत थयेल एक पद्य विषे रसप्रद अने माहितीपूर्ण चर्चा करी छे. अने **अनुसंधान** अंक ४, पृ. १७ पर एमणे 'वाचक' नामे उध्धृत थयेला एक विशेष पद्य पर ध्यान दोर्युं छे, जे उमास्वातिनुं होवानुं एमनुं सूचन छे. प्रस्तुत अंक ४ मां मुनिराज महाबोधिविजये पण उमास्वाति संबंधित एक पद्य विषे उपयुक्त अने पूरक माहिती साथे चर्चा करी छे. अहीं जे अवलोकनो रजू करुं छुं ते उपरकथित बन्ने चर्चाओने अनुसंधाने छे.

(१)

वाचक उमास्वातिए एमनी हाल उपलब्ध छे ते कृतिओ-**सभाष्यतत्त्वार्थाधिगमसूत्र, प्रशमरति-प्रकरण,** अने **क्षेत्रसमास जम्बूद्वीपसमास**-अतिरिक्त अन्य प्रकरणो रच्यां हशे ते वात निःशंक छे. (अलबत्त एमणे ५०० प्रकरणो रच्यां होवानी, ओछामां ओछुं जिनदत्तसूरिना **गणधरसार्धशतक** (इ.स. १०४८) थी नोंधाती आवती कि वदन्तीने तथ्यपूर्ण मानी लेवानी जरुर नथी.) पण मुनिप्रवर शीलचन्द्र विजयजीए उध्धृत थयेलां प्रतिमा-प्रतिष्ठा-विधि एवं प्रतिमा-स्नापन-विधिने लगतां जे बे पद्यो १४ मी सदीनी पोथीमां अपायेल हाथनोंध परथी प्रस्तुत कर्यां छे ते वस्तु-विषय अने शैलीनी दृष्टिए मध्यकाळना कोई चैत्यवासी जतिनी रचना होवानुं प्रतीत थाय छे. उमास्वातिनी पद्यगुम्फनरीतिमां प्राच्यतानो स्पर्श छे, अने ते पूर्णतया निजस्वी छे: पछीना कर्ताओमां एमनी विशिष्ट शैलीनां दर्शन (या अनुकरण पण) बिलकुलेय थतां नथी. जेम "पूजा-विधि-प्रकरण" - जे स्पष्टतया बहु मोडेनी रचना छे - तेमने नामे चढी गयुं तेम उपर्युक्त बे प्रकरणो पण पश्चातकालीन कर्तानी कृतिने प्राचीनतम अने प्रमाणभूत ठराववा १३मा शतक पहेलां कोइए चढावी दीधां छे. परन्तु नवांगवृत्तिकार अभयदेवसूरिनी **स्थानांगवृत्ति** अंतर्गत 'वाचक मुख्य उमास्वाति' ना नामथी उध्धृत थयेलां दान विषयने लगतां सिलसिलाबंध आठ पद्यो शैलीनी दृष्टिए एमनां जणाय छे. (ए कदाच एमनी विनष्ट **श्रावकप्रज्ञप्ति** अथवा **दानप्रकरण** जेवा नामनी जुदी ज

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रचनामांथी लीधा होई शके.)

(२)

आर्य समुद्राचार्यने नामे जे पद्य उध्धृत थयेलुं छे ते पण शैली अने वस्तुनी दृष्टिए मध्यकालीन छे. इस्वीसनना आरंभकाळे थई गयेला 'आर्य समुद्र' साथे एने कंई लेवा-देवा नथी. ए समये 'सूरिमन्त्र' सरखां चैत्यवासी जमानाना वस्तु-विभावोनुं अस्तित्व होवानुं क्यांयथीये प्रमाण नथी: अने ए काळे मुनिओ प्रतिमा-प्रतिष्ठा करावता नहीं; इस्वीसननी पांचमी शती सुधी प्राप्त थता प्रतिमा-लेखो ए वातनी साक्षी पूरे छे. मारा मते प्रस्तुत समुद्राचार्य दशमा शतकमां थई गयेला समुद्राचार्यथी अभिन्न होवा घटे; जे समुद्राचार्ये वायट गच्छना आदिम जीवदेव सूरिना **जिन-स्नात्र-विधि** (प्राय: इस्वी नवम शतक) नामक प्राकृतमां निबध्ध लघु ग्रन्थ पर इ.स. ९५०मां धोळकामां संस्कृत वृत्ति वा पंजिका रची छे ते ज आ कहेवाता 'आर्य' समुद्र जणाय छे. सम्बन्धकर्ता पद्य आ मध्यकालीन (चैत्यवासी) समुद्राचार्यनी कोइ अन्य सगोत्री रचना - प्रतिष्ठा- सम्बध्ध कोइ प्राकृत ग्रन्थमांथी लेवायेलुं लागे छे. पादलिप्त सूरिनी **निर्वाणकलिका** (प्राय: इस्वी ९७५) मां ते (पाठांतर धरावता पाठ साथे) उध्धृत थयुं छे ते घटना रसप्रद छे: पण ध्यानमां राखवा जेवी बाबत ए छे के पादलिप्त सूरि 'त्रण' थयां छे. एमनां जीवनो संबंधी हकीकतो-घटनामां **प्रभावकचरित** (इ.स. १२७७) मां ज नहीं पण तेना पूर्वे रचाई गयेली भद्रेश्वर सूरिनी प्राकृत रचना **कहावलि** (प्राय: इ.स. १०००) मां पण नामसाम्यने कारणे भेळवी देवामां आवी छे. आदि पादलिप्त सूरि आर्य नागहस्ति (प्राय: इस्वी १५०-२००)ना शिष्य हता. प्रतिष्ठानना सातवाहन राजा 'हाल' (के कण्ह)नी सभामां तेमनां बेसणां हतां; अने पाटलिपुत्रना विदेशी शक-मुरुण्ड नी शासकनी शिरोवेदना तेमणे दूर करेली एवी नोंध पण छठ्ठा -सातमा सैकाना भाष्य-चूर्ण्यादि साहित्यमां उपस्थित छे. तेमणे सुप्रसिद्ध **तरंगवईकहा** अने खगोळना कालज्ञान संबंधी ग्रन्थ **ज्योतिष करण्डक**नी रचना करेली. तेओए सौराष्ट्र तरफ विहार कर्यो जणातो नथी. (बहु तो भृगुकच्छ सुधी गया होय). द्वितीय पादलिप्त सूरि वलभीना मैत्रक महाराज्यना आथमता युगमां थई गयेला. तेओ मंत्रसिध्ध अने धातुवाद-निष्णात, किमियागर, हता; स्पष्टतया चैत्यवासी हता. एमणे 'गाहाजुयलेण' शब्दोथी आरंभाता सुवर्णसिद्धि युक्त मनाता लघुस्तवनी रचना करेली, जे उपलब्ध छे. तेओ चरित-कथित ढांक बाजुना धातुविद् या रससिध्ध नागार्जुनना गुरु-मित्र हता.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एमणे ढांक, गिरिनगर, अने मथुरा (ना स्तूपना दर्शनार्थे) यात्राओ करेली. शत्रुंजयनी तळेटीमां इ.स. ८१७ थी पहेलां एमना नामथी 'पालित्तपुर' किंवा 'पादलिप्तपुर' (पालित्तानक, पालिताणा)नी स्थापना थयेली. विशेषमां तेमणे शत्रुंजय पर जिनालयोनी स्थापना करेली, अने मोटे भागे ए पहाड पर ज सल्लेखना करी काळगति पामेला. त्रीजा पादलिप्तसूरि ते विद्याधरकुलना मंडन गणीना शिष्य हता. **निर्वाणकलिका** (प्रायः इस्वी ९७५) तेमनी रचना छे. (कर्णाट देशमां) 'मण्णखेड' (अत्यारनुं 'मळखेड' पहेलानुं 'मान्यखेटक')मां 'कृष्ण भूभुज' एटले के राष्ट्रकूट कृष्ण (तृतीय) ने जे पादलिप्त सूरि मळ्या हशे ते समयनी दृष्टिए आ त्रीजा पादलिप्त सूरि होवा घटे. तेओ पण शत्रुंजय साथे संकळायेला होवानुं लागे छे; केमके शैलीनी दृष्टिए तेमज अंदरनी वस्तुने हिसाबे दशमां शतकमां मूकी शकाय तेवी एक अन्य रचना-**पुण्डरीक-प्रकीर्णक** अपरनाम **सारावली-प्रकीर्णक**-पण तेमनी ज कृति जणाय छे, जेनो आधार लई शत्रुंजयना आदिनाथना बिंबना उध्धारक जावडशाह (प्रायः इस्वी १०००-१०५०)ना समयमां थयेला द्वितीय वज्रस्वामीए **लघुशत्रुंजयकल्प**नी रचना करेली; अने ए बन्नेने नजर सामे राखी तपागच्छीय धर्मकीर्ति गणी (पछीथी धर्मघोष सूरि) ए **शत्रुंजयकल्प** (आ.ई.स. १२४) रच्यो अने ए त्रणेना आधारे खरतरगच्छीय जिनप्रभसूरिए स्वरचित **कल्पप्रदीप** अंतर्गत ''शत्रुंजय गिरिकल्प''नी इ.स. १३२९ मां रचना करेली. (नामसाम्यने कारणे आ बन्ने पश्चात्कालीन कर्ताओए द्वितीय वज्रने प्राचीन वज्रस्वामी (आर्य वज्र, इस्वीसननी प्रथम शताब्दी) अने तृतीय पादलिप्त सूरिने आदि पादलिप्तसूरि (आ.ई.स. २००-२२५) मानी लीधेला.

विशेष नोंधः- अजितदेवसूरिना **मोहोन्मूलनवादस्थल**मां जे पादलिप्त सूरिना **प्रतिष्ठाकल्प**नी वात छे ते आ त्रीजा पादलिप्त सूरिनी रचना होई शके छे; अने त्यां जे हरिभद्रसूरि रचित **प्रतिष्ठाकल्प**नो उल्लेख छे ते आदि हरिभद्र सूरिनो होय तो पण तेमां जे प्रतिष्ठाविधि बतावी हशे ते मध्यकालीन प्रतिष्ठाग्रन्थोना कथनोनी तुलनामां घणी सादी अने टूंकी होवी जोईए. एमना समयमां मध्ययुगथी आरंभायेली अति विस्तारपूर्ण जटिल अने अनेकविध प्रकारनी सामग्रीओ मांगी लेती स्नानविधिओनी रमझट बोलावी प्राचीन प्रतिमाओने अने तेमना अभिलेखोने घसीने चोपट, लीसालपट करी नाखवानी प्रवृत्तिनो हजी अभाव हतो.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुनिवर्य शीलचन्द्र विजयजीए वादीवेताल शान्तिसूरिनी **उत्तराध्ययनवृत्ति** (प्राय: इस्वी १०२५)मांथी 'वाचक' नामथी निम्नोट्टंकित पद्य प्रस्तुत करी तेने उमास्वातिरचित होवानुं सूचन कर्युं छे :

परिभवसि किमिति लोकं, जरसा परिजर्जरितशरीरम्।
अचिरात् त्वमपि भविष्यसि, यौवनगर्वं किमुद्वहसि ?॥

'वाचकमुख्य' ना अभिधानपूर्वक जे कंई उध्धृत थाय ते उमास्वातिकृत होवानो घणो संभव छे; पण वाचको तो अनेक थइ गयेला: जेमके अश्वसेन वाचक, सिद्धसेन वाचक, हारिल वाचक, इत्यादि जेवा अने केटलाक नाम दीधा वगरना वाचकोना उध्धरणो तेमां छे, जेनी शैलीनो अने वस्तुनो उमास्वातिनी शैली अने वस्तु साथे मेळ नथी. (उपर उट्टंकित पद्य इस्वीसनना १७मा सैकाना प्रथम चरणमां थई गयेला तपागच्छीय भावविजयनी उत्तराध्ययन वृत्तिमां पण उध्धृत छे, जे तेमणे शांतिसूरिनी वृत्तिमांथी लीधुं हशे.) ते पद्य अवश्य प्राचीन छे पण तेमां उमास्वातिनी पद्य-निबन्धन रीत न होतां नोखा प्रकारनी अने तेमना काळ बादनी छे. वस्तुतया तेनी शैली शान्तिसूरि ए नाम दईने (अने अन्यथा) हारिल वाचकनां जे पद्यो टांक्या छे तेने खूब ज मळती छे. त्यां एवो ज प्रशान्त मृदु-मंजुल प्रवाह वरताय छे अने एवां ज ललित-गंभीर तत्त्व तथा वैराग्यपूर्ण विषाद विलसतां देखाय छे;

यथा;

तथा च हारिलवाचक:
चलं राज्यैश्वर्यं धनकनकसार: परिजनो
नृपाद् वाल्लभ्यं च चलममरसौख्यं च विपुलम्। (?)
चलं रूपारोग्यं चलमिह चरं जीवितमिदं
जनो दृष्टो यो वै जनयति सुखं सोऽपि हि चल:॥

तथा च हारिल:
वातोद्धूतो दहति हुतभुग्देहमेकं नराणां
मत्तो नाग: कुपितभुजगश्चैकदेहं तथैव।
ज्ञानं शीलं विनयविभवौदार्यविज्ञानदेहान्
सर्वानर्थान् दहति वनिताऽऽमुष्मिकानैहिकांश्च॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तथा चाहुः

भवित्रीं भूतानां परिणतिमनालोच्य नियतां
पुरा यद्यत्किञ्चिद्विहितमशुभं यौवनमदात्।
पुनः प्रत्यासन्ने महति परलौकैकगमने
तदेवैकं पुंसां व्यथयति जराजीर्णवपुषाम्॥

-उत्तराध्ययन वृत्ति

एम जणाय छे के हारिल वाचक-हरिगुप्त वाचकनी भर्तृहरिना **वैराग्य शतक** समान आजे अप्राप्त एवी कोई अद्भुत रचना हती, तेमांथी ए सौ पद्यो लेवायां छे. उद्योतन सूरि कृत **कुवलयमालाकहा** (इ. स. ७७८)नी प्रशस्ति अनुसार हरिगुप्त वाचक हूणराज तोरमाणना गुरु हता. अने एक परंपरा-गाथामां हरिभद्रना अवसाननी मिति सं. ५८५ ई. स. ५२९ अपायेली छे ते हरिभद्रनी न होतां हरिगुप्त वाचकनी होवानो तर्क त्रिपुटी महाराज आदि विद्वानोनो मत छे, जे ठीक जणाय छे. ए लक्षमां लेतां प्रस्तुत अप्राप्त कृति इस्वी. ५००नी आसपासना अरसानी, अने एथी उमास्वातिनी कृतिओ पछी दोढसो एक वर्ष बादनी छे. आ टांकणे उमास्वातिना पृथक् पृथक् कृतिओना पद्यो- मूळमांथी अने उध्धृत थया होय तेवा असली पण अनुपलब्ध कृतिओमांथी अहीं तुलनार्थे रजु करुं छुं :

दग्धे बीजे यथाऽत्यन्तं, प्रादुर्भवति नाङ्कुरः।
कर्मबीजे तथा दग्धे, नारोहति भवाङ्कुरः॥

सभाष्य तत्त्वार्थाधिगमसूत्र

क्रोधात् प्रीतिविनाशं मानाद् विनयोपघातमाप्नोति ।
शाठ्यात्प्रत्ययहानिः सर्वगुणविनाशनं लोभात्॥
कलरिभितमधुरगान्धर्वतूर्ययोषिद्विभूषणरवाद्यैः।
श्रोत्रावबद्धहृदयो हरिण इव विनाशमुपयाति॥
स्नानाङ्गरागवर्तिकवर्णकधूपाधिवासपटवासैः।
गन्धभ्रमितमनस्को मधुकर इव नाशमुपयाति॥
मिष्टान्नपानमांसौदनादिमधुररसविषयगृद्धात्मा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गलयन्त्रपाशबद्धो मीन इव विनाशमुपयाति॥
निर्जितमदमदनानां वाक्कायमनोविकाररहितानाम्।
विनिवृत्तपराशानामिहैव मोक्षः सुविहितानाम्॥
नैवास्ति राजराजस्य तत्सुखं नैव देवराजस्य।
यत्सुखमिहैव साधोर्लोकव्यापाररहितस्य॥
यद्वत्पङ्काधारमपि पङ्कजं नोपलिप्यते तेन।
धर्मोपकरणधृतवपुरपि साधुरलेपकस्तद्वत्॥
यद्वत्तुरगः सत्स्वप्याभरणविभूषणेष्वनभिषक्तः।
तद्वदुपग्रहवानपि न संगमुपयाति निर्ग्रन्थः॥

-प्रशमरतिप्रकरण

"उक्तं च वाचकमुख्यैरस्मास्वातिपादैः -
कृपणेऽनाथदरिद्रे व्यसनप्राप्ते च रोगशोकहते।
यद् दीयते कृपार्थादनुकम्पा तद् भवेद् दानम्॥
अभ्युदये व्यसने वा यत् किञ्चिद् दीयते सहायार्थम्।
तत्सङ्ग्रहतोऽभिमतं मुनिभिर्दानं न मोक्षाय॥
नटनर्तमुष्टिकेभ्यो दानं सम्बन्धिबन्धुमित्रेभ्यः ।
यद् दीयते यशोऽर्थं गर्वेण तु तद् भवेद् दानम्॥
हिंसानृतचौर्योद्यतपरदारपरिग्रहप्रसक्तेभ्यः।
यद् दीयते हि तेषां तज्जानीयादधर्माय॥

-स्थानांगवृत्ति

उमास्वातिनी शैली ओजस्वी, उर्जस्वी, अने अर्थ-गौरवी जरूर छे पण सुललित नथी; एमनुं गुम्फन वैराग्यवान सैध्धान्तिक विद्वानने शोभे तेवुं जरूर छे, पण तेमां कविहृदयनी अनुपस्थिति छे.

* * *

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org